[२०२२] ३ S.C.R. 962

मस्त रेहाना बेगम
बनाम
असम राज्य व अन्य

(आपराधिक अपील संख्या ११८/२०२२)
२१ जनवरी २०२२
[**न्यायमूर्ति श्री डॉ. धनंजय वाय चंद्रचूड एवं बेला एम.त्रिवेदी**]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, १६७३ - धारा ४८२ - भारतीय दण्ड संहिता १८६० - धारा ४६४, ४६५ - अपीलार्थी पत्नि ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा ४६४ व ४६५ के तहत दूसरे प्रत्यर्थी पति द्वारा दायर परिवाद को रद्द करने के लिए धारा ४८२ के तहत आवेदन प्रस्तुत किया गया - एकल न्यायाधीश द्वारा खारिज किया गया - अपील में अभिनिर्धारित किया गया कि जहां अपीलार्थी और दूसरे प्रत्यर्थी के मध्य विवाद है कि क्या जिस तारीख को उसने विवाह किया था, उस दिन उसका विवाह अस्तित्व में था या नहीं, कुटुम्ब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश के निर्णायक निष्कर्ष का विषय है, जो अंतिम रूप ले चुका है - अपीलार्थी और दूसरा प्रत्यर्थी कुटुंब न्यायालय के निर्णय के पक्षकार थे-साक्ष्य का कोई विवादास्पद सारभूत या विवादित प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है-इस प्रकार आपराधिक कार्यवाही को धारा ४६४ व ४६५ भा.द.सं. के तहत अनुमति देता है - यह प्रक्रिया का दुरूपयोग है - उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश को इस निष्कर्ष पर पहुंचना उचित नहीं था कि यह विवाद कि क्या अपीलार्थी ने पहले से कोई विवाह किया था , एक अत्यधिक विवादास्पद मामला है जिसकी सुनवाई अभिलख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर की जानी है - आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया गया - परिवाद को रद्द करने के लिए अपीलार्थी द्वारा दायर याचिका को अनुमति प्रदान की गई - कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम १६८४ - धारा ७ (१) ।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, १६७३ - धारा ४८२ - निरस्तीकरण - सामग्री के प्रकार जिनका उच्च न्यायालय मूल्यांकन कर सकता है - साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत सामग्री पर विचार करने और साक्ष्य के विवेचन के मध्य अंतर - विचार विमर्श।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, १६७३ - धारा ४८२ - कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम १६८४ - धारा ७ (१) - अभिनिर्धारित किया है : धारा ७ (१) (बी) अधिनियम १६८४ कुटुम्ब न्यायालय को वैवाहिक स्थिति निर्धारित करने के लिए अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है - धारा ७ (१) कुटुम्ब न्यायालय को जिला न्यायालय का दर्जा प्रदान करती है और धारा ७ (२) इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय IX के तहत प्रथम श्रेणी मजिस्टेट के द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता प्रदान करता है, इस प्रकार इस तरह का निर्धारण करने के लिए साक्ष्य एकत्रित करने में सक्षम बनाना - इस प्रकार कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करना, जिसके पास आपराधिक मामले में कथित अपराध की गंभीरता का निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र है, उन साक्ष्य सामग्रियों पर विश्वास करने के समान नहीं होगा, जो विचारण न्यायालय द्वारा निष्कर्षित किया गया, जैसे कि मजिस्ट्रेट को भेजे जाने से पहले की अन्वेषण रिपोर्ट।

न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए -

अभिनिर्धारित : १.१ दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा दर्ज कराया गया परिवाद यह है कि ११ जनवरी १६६६ को, जब उसने और अपीलार्थी ने विवाह किया तो अपीलार्थी का पूर्ववर्ती विवाह अस्तित्व में था जिसके

परिणामस्वरूप वह भारतीय दण्ड संहिता की धारा ४६४ के तहत दण्डनीय अपराध की दोषी है। न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए अभिलेख से यह दर्शित है कि अपीलार्थी ने यह घोषणा प्राप्त करने के लिए कुटुम्ब् न्यायालय का रूख किया कि तलाक जो दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा घोषित किया गया था, मुस्लिम विधि के तहत शून्य एवं अमान्य था। अपने कथन में दूसरे प्रत्यर्थी ने विशेष रूप से कथित तलाक और मुस्लिम पसर्नल लॉ के तहत सदर काजी द्वारा जारी तलाक प्रमाण पत्र का समर्थन किया। अतिरिक्त लिखित कथन में दूसरे प्रत्यर्थी ने अभिवचनित किया कि अपीलार्थी ने उसे यह नहीं बताया कि उसका किसी अन्य के साथ पूर्व विवाह हुआ था, जो ११ जून १६८७ को सम्पन्न हुआ था। कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत की गई। दूसरे प्रत्यर्थी ने कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत की। गुवाहाटी में कुटुम्ब् न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश ने २० जुलाई २०१७ के निर्णय द्वारा घोषणा की कि तलाक जो कथित रूप से दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा उसे दिया गया था, शून्य एवं अमान्य है। उक्त निर्णय स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि क्या (I) अपीलार्थी का किसी अन्य व्यक्ति के साथ पूर्ववर्ती विवाह हुआ था; और (II) दूसरे प्रत्यर्थी ने वैध तलाक प्राप्त किया था, यह मामला कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष विवाद में था। अपीलार्थी और दूसरे प्रत्यर्थी के मध्य तथ्य का यह निष्कर्ष है कि जब अपीलार्थी ने उससे विवाह किया था तो उसका पूर्व विवाह अस्तित्व में नहीं था। कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय को एम.ए.टी. अपील संख्या ४७/२०१७ में चुनौती दी गई थी। उच्च न्यायालय की एक खण्डपीठ ने २० जून २०१६ को गैर अभियोजन की अपील को खारिज कर दिया, जिसमें कहा गया था कि पिछले अवसर पर २७ मई २०१६ को कोई भी उन कार्यवाहियों में दूसरे प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित नहीं हुआ था। उच्च न्यायालय का आदेश यथास्थिर है। फिर भी, आक्षेपित निर्णय में कहा गया है कि अपीलार्थी का वर्तमान विवाह का तथ्य एक विवादास्पद मामला है और अपीलार्थी के विरूद्ध आपराधिक परिवाद को रद्द करने से इनकार कर दिया गया है। (पैरा ११-१३) (६६८-डी-एच;६६६-बी-ई)

१.२ कुछ परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय को धारा ४८२ दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत निरस्तीकरण/रद्दकरण की अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से पहले अन्य सामग्रियों पर विचार करने का अधिकार है। वतर्मान मामले में अपीलार्थी और दूसरा प्रत्यर्थी कुटुम्ब् न्यायालय के निर्णय के पक्षकार थे। साक्ष्य की कोई विवादास्पद सामग्री और विवादित प्रश्न उत्पन्न नहीं होते हैं। उपरोक्त पृष्ठभूमि में धारा ४६४ एवं ४६५ के अंतर्गत आपराधिक कार्यवाही को अग्रसर होने की अनुमति देना प्रक्रिया का दुरूपयोग होगा। अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य यह विवाद कि उसने जिस तारीख को दूसरे प्रत्यर्थी से विवाह किया था, उस तारीख को उसका पूर्व विवाह अस्तित्व में था या नहीं, यह कुटुम्ब् न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश के निर्णायक निष्कर्ष का विषय है, जिसने अंतिम रूप प्राप्त कर लिया है। धारा ७ (१) (बी) अधिनियम १६८४ कुटुम्ब न्यायालय को वैवाहिक स्थिति निर्धारित करने के लिए अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है। कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम की धारा ७ (१) कुटुम्ब न्यायालय को जिला न्यायालय का दर्जा प्रदान करती है और धारा ७ (२) इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय IX के तहत प्रथम श्रेणी मजिस्टेट के द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता प्रदान करता है, जिससे यह इस तरह का निर्धारण करने के लिए साक्ष्य एकत्रित करने में सक्षम होता है। इस प्रकार कुटुम्ब् न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करना जिसके पास आपराधिक परिवाद में कथित अपराध की गंभीरता निर्धारित करने का क्षेत्राधिकार है, उन साक्ष्य सामग्रियों पर विश्वास करने के समान नहीं होगा, जो विचारण न्यायालय द्वारा निष्कर्षित किया गया, जैसे कि मजिस्टेट को भेजे जाने से पहले की अन्वेषण रिपोर्ट। इसलिए इस मामले में, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश को इस निष्कर्ष पर पहुंचना उचित नहीं था कि यह विवाद कि क्या अपीलार्थी ने पहले से कोई विवाह किया था , एक "अत्यधिक विवादास्पद मामला" है जिसकी सुनवाई अभिलख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर की जानी है। आक्षेपित निर्णय एवं उच्च न्यायालय के आदेश को निरस्त किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत याचिका जो परिवाद को निरस्त करने के लिए थी, को स्वीकार किया जाता है। एस.डी.जे.एम (एस) II कामरूप (एम), गुवाहाटी के न्यायालय में लम्बित शिकायत/परिवाद निरस्त किया जाता है। (पैरा १५-१६) (६७४-एफ-एच; ६७५ -ए-सी; ६७६ -डी-ई)

निहारिका इंफास्टक्चर बनाम महाराष्ट्र राज्य **२०२१ एससीसी ऑनलाईन एस.सी.३१५** ; हरियाणा राज्य बनाम भजनलाल **१९९२ पूरक (१) एससीसी ३३५** ; **(१९९०) ३ पूरक एस.सी.आर.२५९** आंध्रप्रदेश राज्य वि० गोलकोण्डा लिंगा स्वामी **(२००४) ६ एससीसी ५२२ ; (२००४) ३ पूरक एस.सी.आर १४७** प्रतिभा वि० रामेश्वरी देवी **(२००७) १२ एससीसी ३९९ ; (२००७) ९ एससीआर १०३८** मध्यप्रदेश राज्य वि० अवध किशोर गुप्ता (२००४) १ एससीसी ९९१; (२००३) ५ पूरक एससीआर ९७२; पीएस राज्य वि० बिहार राज्य (१९९९) ९ एससीसी १; (१९९९) २ पूरक एससीआर ९३१ - संदर्भ लिया।

संदर्भित न्यायदृष्टांत

[१९९०] ३ पूरक एससीआर २५९	अनुसरित किया	पैरा १४
[२००४] ३ पूरक एससीआर १४७	अनुसरित किया	पैरा १४
[२००७] ९ एससीआर १०३८	अनुसरित किया	पैरा १५
[२००३] ५ पूरक एससीआर ९७२	अनुसरित किया	पैरा १५
[१९९९] २ पूरक एससीआर ९३१	अनुसरित किया	पैरा १५

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील क्र. ११८/२०२२.

उच्च न्यायालय गुवाहाटी की आपराधिक याचिका क्र. १७९/२०१९ के निर्णय एवं आदेश दिनांक ०४-०४-२०१८ (असम, नागालैण्ड, अरूणाचलप्रदेश, के उच्च न्यायालय)

अपीलार्थी द्वारा अधिवक्ता फुजैल अहमद अयुबी, सुश्री कनिष्का प्रसाद, इकबाल मुश्ताक, सुश्री आकांक्षा राय।

प्रत्यर्थी द्वारा अधिवक्ता नलिन कोहली एएजी, सुश्री दीक्षा राय, अंकित राय, अंकित अग्रवाल, सुश्री निमिशा मेनन, सुश्री रागिनी पाण्डेय।

न्यायमूर्ति श्री डॉ. धनंजय वाय चंद्रचूड

द्वारा निर्णय दिया गया कि -

1. विलम्ब को क्षमा किया गया।

2. आवेदन स्वीकार किया गया।

3. यह अपील गुवाहाटी उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश की याचिका क्र.१७९/२०१९ में दिनांक ०४ अप्रैल २०१८ से उत्पन्न हुई। एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी की ओर से परिवाद रद्द करने की याचिका अंतर्गत धारा ४८२ दण्ड प्रक्रिया संहिता १९७३[१] को खारिज कर दिया। उक्त शिकायत आपराधिक प्रकरण क्रमांक २५१२/२०१५ पर एस.डी.जे.एम (एस) II कामरूप (एम), गुवाहाटी के न्यायालय में धारा ४९४ व ४९५ भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत लम्बित है।

4. द्वितीय प्रत्यर्थी ने १९ अक्टूबर २०१५ को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत दर्ज की जिसमें कहा गया कि ११ जनवरी १९९९ को उसने और अपीलार्थी ने मुस्लिम विधि के अनुसार विवाह किया था। परिवाद के अनुसार प्रत्यर्थी को पता चला कि अपीलार्थी की पहला विवाह शौकत अली नाम के किसी अन्य व्यक्ति से हुई थी। आरोप यह है कि पिछले विवाह के अस्तित्व में रहने के दौरान उसने

१ दण्ड प्रक्रिया संहिता

तथ्यों को छिपाकर दूसरे प्रत्यर्थी से विवाह किया था। परिवाद के अनुसार अपीलार्थी ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा ४६५ के तहत दण्डनीय अपराध किया है क्योंकि उसने इस तथ्य को छिपाया था कि जब उसने दूसरे प्रत्यर्थी से परिवाद किया था तो उसका एक विवाह अस्तित्व में था।

5. अपीलार्थी का मामला यह है कि उसकी और दूसरी प्रत्यर्थी की शादी ११ जनवरी १६६६ को हुई थी। दहेज की मांगो को पूरा करने में विफलता के कारण दूसरे प्रत्यर्थी पर वैवाहिक दुर्व्यवहार का आरोप लगाते हुए अपीलार्थी ने शिकायत दर्ज की और धारा ४६८ ए भारतीय दण्ड संहिता[२] के अंतर्गत आपराधिक प्रकरण अर्थात अपराध क्र. ५१/२०११ पर तदनुसार 'ऑल वुमन पुलिस स्टेशन पर दिनांक ०५-०६-२०११ पर दर्ज किया गया था। दूसरी प्रत्यर्थी पर आरोप है कि उसने १८-०८-२०११ को सदर काजी कामरूप, गुवाहाटी के माध्यम से अपीलार्थी के एक पड़ोसी को कथित तलाक प्रमाण पत्र भेजा था। १७ सितम्बर २०११ को अपीलार्थी ने कथित तलाक को चुनौती देने के लिए कुटुम्ब न्यायालय- I, कामरूप के प्रधान न्यायाधीश् के समक्ष कार्यवाही जिसे एफ.सी. (सिविल) प्रकरण क्र.५४५/२०११ के रूप में दर्ज् किया गया था। २० जुलाई २०१७ के फैसले /निर्णय के अनुसार प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय - I ने दूसरे प्रत्यर्थी के द्वारा अपीलार्थी को कथित तौर पर दिया गया तलाक शून्य एवं अकृत घोषित कर दिया। इसी बीच ११ सितम्बर २०१५ को कथित कूटरचित प्रमाण पत्र द्वितीय प्रत्यर्थी सदर काजी से दुरभिसंधि करने के संबंध में धारा ४२०, ४०६, ४६८ व ३४ भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत प्रकरण क्र. १४६/२०१५ पर पंजीबद्ध की गई। १६ अक्टूबर २०१५ को द्वितीय प्रत्यर्थी दाण्डिक प्रकरण क्र. २५१२/२०१५ पर एक परिवाद दर्ज कराया जिसमें आरोप लगाया गया कि अपीलार्थी ने भा .द.सं. की धारा ४६५ के तहत अपराध किया गया है।

6. अपीलार्थी ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा ४८२ के तहत कार्यवाही संस्थित की। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने निर्णय दिनांक ०४-०४-२०१८ से याचिका को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि "यह अत्यधिक विवादित है " कि क्या अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता के साथ शादी से पहले किसी अन्य व्यक्ति के साथ वैवाहिक संबंध बनाये थे और क्या पहले की शादी वैद्य तलाक से समाप्त हुई थी, इसके अलावा उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी एक विशिष्ट मामले के साथ नहीं आया था कि उसकी न तो पहले विवाह हुआ था या तलाक हुआ था। इसीलिए उच्च न्यायालय के मत में शिकायत में विचारण का मामला है और दण्ड प्रक्रिया सहिता की धारा ४८२ के तहत प्रस्तुत याचिका पर विचार नहीं किया जा सकता। परिणामस्वरूप याचिका खारिज कर दी गई।

7. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अभिभाषक श्री फुज़ैल अहमद अयुबी ने व्यक्त किया है कि दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा जो शिकायत दर्ज की गई थी वह मूल रूप से उस शिकायत का जबावी विस्फोट

२ भारतीय दण्ड संहिता

था जो अपीलकर्ता द्वारा दर्ज की गई थी कि तलाक का कथित प्रमाण पत्र जो प्राप्त किया गया है वह दूसरे प्रत्यर्थी ने सदर काजी के साथ दुरभिसंधि से कूट रचना की है। विद्वान अभिभाषक ने तर्क किया है कि शिकायत में आरोप लगाया गया है कि अपीलार्थी ने पहले विवाह के अस्तित्व में रहते हुए दूसरे प्रत्यर्थी के साथ विवाह किया। अपीलार्थी द्वारा दिनांक ११ सितम्बर २०१५ को दूसरे प्रत्यर्थी के विरूद्ध शिकायत दर्ज् करने के बाद १६ अक्टूबर २०१५ को दर्ज् किया गया था। इसके अलावा व्यक्त किया गया है कि कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय का यह निष्कर्ष कि अपीलार्थी ने शौकत अली के साथ अस्तित्वात्मक विवाह नहीं किया था, अंतिम रूप ले चुका है और उसके पक्षकारों पर बंधनकारी है। इस पृष्ठभूमि में यह आग्रह किया गया कि आपराधिक कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरूपयोग होगा।

8. इन कार्यवाहियों में ०२ अगस्त २०१६ को एक आदेश द्वारा एक नोटिस जारी किया गया था जो इस प्रकार है -

"याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अभिभाषक ने २० जुलाई २०१७ (अनुलग्न - पी४) को प्रधान न्यायाधीश- I कामरूप, गुवाहाटी द्वारा दर्ज् किए गए निष्कर्ष पर विश्वास किया है कि दूसरा प्रत्यर्थी यह साबित करने में विफल रहा है कि जब याचिकाकर्ता ने जब उससे विवाह किया तब उसका एक विवाह अस्तित्व में था।

विलम्ब क्षमा के आवेदन एवं विशेष अनुमति याचिका पर नोटिस जारी हों जो ०८ सप्ताह में वापस हो।

लिस्टिंग की अगली तारीख तक एस.डी.जे.एम (एस) II कामरूप (एम), गुवाहाटी के न्यायालय में लम्बित सी.आर. क्रमांक २५१२/२०१५ में आगे की कार्यवाही तक रोक रहेगी।"

9. कार्यालय की रिपोर्ट यह इंगित करती है कि दूसरे प्रत्यर्थी पर तामील कर दी गई है किन्तु उनकी ओर से कोई उपस्थिति दर्ज नहीं कराई गई है।

10. असम राज्य की ओर से श्री नलिन कोहली ए.ए.जी. सुश्री दीक्षा राय के साथ उपस्थित हुए। अपीलार्थी की ओर से किए गए तर्कों का विरोध करते हुए ए.ए.जी. ने व्यक्त किया कि यह विवाद कि क्या अपीलार्थी की शौकत अली के साथ पूर्व में विवाह हुआ था एवं उक्त विवाद कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय से सामने आएगा। इसलिए ए.ए.जी. ने व्यक्त किया कि शिकायत में आरोप विचारण के मामलों को बढायेगा और धारा ४८२ द.प्र.सं. के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार करना उच्च न्यायालय के लिए उचित नहीं था।

11. दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा दर्ज् की गई शिकायत संक्षेप में इस प्रकार है कि ११ जनवरी १६६६ को जब उसने और अपीलार्थी ने विवाह किया तो अपीलार्थी का पूर्व विवाह अस्तित्व में था जिसके

परिणामस्वरूप वह धारा ४६४ भा.द.सं. के तहत दण्डनीय अपराध का दोषी है। अब न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए अभिलेख से दर्शित है कि अपीलार्थी ने यह घोषणा करने के लिए कुटुम्ब न्यायालय का रूख किया कि दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा सुनाया गया तलाक कानून के तहत शून्य एवं अमान्य था । अपने लिखित कथन में दूसरे प्रत्यर्थी ने विशेष रूप से कथित तलाक एवं मुस्लिम पसर्नल लॉ के तहत सदर काजी द्वारा जारी तलाक प्रमाण पत्र का समर्थन किया। इसके अतिरिक्त अपने लिखित कथन में दूसरे प्रत्यर्थी ने यह अभिवचन किया कि अपीलार्थी ने उसे यह नहीं बताया कि उसकी किसी व्यक्ति से पूर्व में शादी हुई थी, जो ११ जून १६८७ को सम्पन्न हुई थी। कुटुम्ब न्यायालय द्वारा विरचित किए गए विवाद्यकों में से दूसरा विवाद्यक इस प्रकार है -

"(२) क्या प्रत्यर्थी से विवाह करते समय याचिकाकर्ता का विवाह शौकत अली पुत्र राजा अली उर्फ भैया अली से हो चुका था ?"

12. कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत की गई। दूसरे् प्रत्यर्थी ने कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य दी। प्रधान न्यायाधीश कुटुम्ब न्यायालय गुवाहाटी ने निर्णय दिनांक २०जुलाई २०१७ के माध्यम से कथित तौर पर दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा उसे दिया गया तलाक शून्य एवं अमान्य घोषित किया। प्रधान न्यायाधीश जिस निश्कर्ष पर पहुंचे वह नीचे दिया गया है -

"उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी क्र.०१ द्वारा दिया गया तलाक उचित प्रक्रिया के अनुसार नहीं है क्योंकि पक्षकारों के मध्य कोई सुलह नहीं हुई थी और इस तरह तलाक वैद्य नहीं है। यह भी पाया गया कि प्रत्यर्थी यह भी साबित करने में विफल रहा है कि याचिकाकर्ता पहले से ही शौकत अली पुत्र राजा अली उर्फ भैया अली से विविाहत थी।"

13. उपरोक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि क्या (१) अपीलार्थी का किसी अन्य व्यक्ति के साथ पूर्व में विवाह हुआ था, और (२) कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष दूसरे प्रत्यर्थी ने वैद्य तलाक प्राप्त कर लिया था। अपीलार्थी और दूसरे प्रत्यर्थी के तथ्य का निश्कर्ष यह है कि जब अपीलार्थी ने उससे विवाह किया था तब उसका पूर्व विवाह अस्तित्व में नहीं था। कुटुम्ब न्यायालय के उक्त निर्णय को एम.ए.टी के अपील संख्या क्र. ४७/२०१७ में प्रश्नगत किया गया था। उच्च न्यायालय की एक खण्डपीठ ने २० जून २०१६ को गैर अभियोजन की अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि २७ मई २०१६ को भी पिछले अवसर पर कोई उपस्थित नहीं हुआ था। उच्च न्यायालय का आदेश जारी रखा गया। फिर भी आक्षेपित निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी के मौजूदा विवाह का तथ्य एक विवादास्पद मामला है और अपीलार्थी के विरूद्ध आपराधिक शिकायत को रदद करने से इनकार कर दिया गया है।

14. **निहारिका इंफास्टक्चर बनाम महाराष्ट्र राज्य**[३] के मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने विश्लेषण किया और दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा ४८२ के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट[४] को रदद

३- २०२१ एससीसी ऑनलाईन एस.सी.३१५

४- "**एफ.आई.आर**"

करने पर कानून को नियंत्रित करने वाले प्रासंगिक सिद्धांतों को खारिज किया। न्यायालय ने कहा -

"५७ इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों से ख्वाजा नजीर अहमद(सुप्रा) के मामलों में प्रिवी काउंसिल के निर्णय से विधि के निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैं :

I. पुलिस के पास संज्ञेय अपराधों की जांच करने के लिए दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIV में निहित प्रासंगिक प्रावधानों के तहत वैधानिक अधिकार और कर्तव्य हैं;

II. न्यायालय संज्ञेय अपराधों की किसी भी जांच को विफल नहीं करेगी;

III. हालांकि जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में किसी भी संज्ञेय अपराध या कोई अन्य अपराध का खुलासा नहीं किया जाता है वहां न्यायालय अन्वेषण जारी रखने की अनुमति नहीं देगा;

IV. 'दुर्लभ से दुर्लभतम् मामलों में रदद करने की शक्ति का प्रयोग सावधानी से किया जाना चाहिए। (दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा ४८२ के तहत रदद करने के लिए प्रस्तुत आवेदन में दुर्लभत्तम् मामलों को उस मानदण्ड के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए जो तैयार किया गया है। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा मृत्युदण्ड के मामलों में पहले बताया गया है) ;

V. किसी एफ.आई.आर./परिवाद की जांच करते समय, जिसे रद्द करने की मांग की गई है, न्यायालय एफ.आई.आर./परिवाद में लगाये गये आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता या अन्यथा की जांच शुरू में ही कर सकती है ;

VI. आपराधिक कार्यवाही को शुरू में ही बाधित नहीं किया जाना चाहिए;

VII. किसी परिवाद/एफ.आई.आर. को रद्द करना एक अपवाद और सामान्य नियम से दुर्लभ होना चाहिए ;

VIII. न्यायालयों को पुलिस के अधिकार क्षेत्र को हड़पने से रोक दिया जाता है क्योंकि राज्य के दो अंग दो विशिष्ट क्षेत्रों में काम करते हैं। हालांकि न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को धारा ४८२ दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा न्याय के उददेश्यों को सुरक्षित करने या उपरोक्त प्रक्रिया को रोकने के लिए मान्यता दी गई है;

IX. न्यायालय और पुलिस के कार्य एक दूसरे के पूरक हैं, अतिव्यापी नही;

X. असाधारण मामलों को छोड़कर जहां गैर हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप न्याय की हानि होगी, न्यायालय और न्यायिक प्रक्रिया को अपराधों की जांच के चरण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए;

XI. न्यायालयों को असाधारण और अंतर्निहित शक्तियां मनमाने क्षेत्राधिकार से कार्य करने के लिए प्रदान नहीं की जाती हैं;

XII. प्रथम सूचना रिपोर्ट कोई विश्वकोष नहीं है। जिसमें रिपोर्ट किए गये अपराध से संबंधित सभी तथ्य और विवरण का खुलासा किया जाना चाहिए। इसीलिए जब पुलिस के द्वारा जब जांच की जाती है तब न्यायालय को प्रथम सूचना रिपोर्ट में आरोप के गुण-दोष पर नहीं जाना चाहिए। पुलिस को जांच पूरी करने की अनुमति दी जानी चाहिए। अस्पष्ट तथ्यों के आधार पर यह निश्कर्ष निकालना जल्दबाजी होगी कि परिवाद/एफ.आई.आर. जांच के लायक नहीं है या कानून की प्रक्रिया का दुरूपयोग है। जांच के दौरान या उसके बाद अन्वेषण अधिकारी को पता चलता है कि शिकायतकर्ता द्वारा दिये गये आवेदन में कोई तथ्य नहीं है तो अन्वेषण अधिकारी विद्वान मजिस्टेट के समक्ष एक उचित रिपोर्ट/सारांश प्रस्तुत कर सकता है।

XIII. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा ४८२ के तहत शक्ति बहुत व्यापक है लेकिन व्यापक शक्ति प्रदान करने के लिए न्यायालय को सतर्क रहने की आवश्यक्ता है। यह न्यायालय पर एक कठिन और अधिक परिश्रमी कर्तव्य डालता है ;

XIV. **हालांकि, साथ ही, न्यायालय यदि उचित समझती है तो रद्द करने के मापदण्डों और विधि द्वारा लगाये गये आत्मसंयम को ध्यान में रखती है, विशेष रूप से आर.पी.कपूर (सुप्रा) एवं भजनलाल (सुप्रा) में प्रथम सूचना रिपोर्ट/परिवाद को रद्द करने का अधिकार क्षेत्र निर्धारित किया गया है ;**

XV. जब कथित अभियुक्त के द्वारा प्रथम सूचना रिपोर्ट को रद्द करने की प्रार्थना की जाती है तो न्यायालय जब धारा ४८२ दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत शक्ति का प्रयोग करती है तो उसे केवल इस बात पर विचार करना होता है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाये गये आरोप संज्ञेय अपराध घटित होने का खुलासा करते हैं या नहीं, गुण-दोष के आधार पर इस पर विचार करने की आवश्यक्ता नहीं है कि आरोप संज्ञेय अपराध हैं या नहीं एवं न्यायालय को अन्वेषण एजेंसी/पुलिस को एफ.आई.आर. में आरोपों की जांच करने की अनुमति देनी होगी।"

(विशेष बल दिया गया)

इस न्यायालय के दो न्यायाधीश की पीठ द्वारा हरियाणा राज्य बनाम भजनलाल[५] के मामले में प्रथम सूचना रिपोर्ट को निरस्त करने के मानदण्ड निर्धारित किए गए हैं। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

५- १९९२ पूरक (१) एएससीसी ३३५

"१०२. अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों और निर्णयों की एक श्रंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों की व्याख्या की पृष्ठभूमि में अनुच्छेद २२६ के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग या संहिता की धारा ४८२ के तहत अंतर्निहित शक्तियों के संबंध में, जिसे हमने उपर निकाला एवं पुनः प्रस्तुत किया है, किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया को या अन्यथा न्याय के उददेश्यों की पूर्ति के लिए, कोई सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और चेनलयुक्त अनन्य दिशा निर्देश या कठोर सूत्र निर्धारित करना और असंख्य प्रकार के मामलों में एक विस्तृत सूची देना संभव नहीं हो सकता है। हम उदाहरण के माध्यम से मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां देते हैं जिनमें दुरूपयोग को रोकने के लिए ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है -

(1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या परिवाद में लगाये गये आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाये और उनकी सम्पूर्णता में स्वीकार किया जाये, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनता है या अभियुक्त के विरूद्ध कोई मामला नहीं बनता है।

(2) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट और संलग्न सामग्री में आरोप, यदि कोई हो, संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो मजिस्ट्रेट के धारा १५६ (२) के तहत दिये गये आदेश के अलावा संहिता की धारा १५६ (१) के अंतर्गत पुलिस अधिकारी द्वारा किए गए अन्वेषण को उचित ठहराया जा सकता है।

(3) **जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या परिवाद में लगाये गये निर्विवादित आरोप और उनके समर्थन में एकत्रित की गई साक्ष्य किसी अपराध के घटित होने का खुलासा नहीं करती है और न ही अभियुक्त के खिलाफ मामला बनता है।**

(4) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाये गये आरोप संज्ञेय अपराध नहीं हैं अपितु असंज्ञेय अपराध हैं जैसा कि संहिता की धारा १५५ (२) के तहत माना गया है, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी पुलिस अधिकारी द्वारा किसी भी जांच की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(5) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाये गये आरोप कितने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं जिनके आधार पर कोर्ठ भी विवेकशील व्यक्ति कभी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि अभियुक्त के विरूद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत आपराधिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में कार्यवाही संस्थित या जारी रखने पर स्पष्ट रोक है और/ या जहां पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए कोई विशेष प्रावधान संहिता या संबंधित अधिनियम में है।

(7) जहां किसी आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से दुर्भावना के साथ भाग लिया जाता है और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण रूप से अभियुक्त पर प्रतिशोध लेने के लिए और निजी और व्यक्तिगत द्वेष् के कारण् उसे परेशान करने की दृष्टि से शुरू की जाती है।

(विशेष बल दिया गया)

आंधप्रदेश राज्य बनाम गोलकुंडा लिंगा स्वामी[६] मामले में, इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने उन सामग्रियों के प्रकारों के बारे में विस्तार से बताया, जिनका मूल्यांकन उच्च न्यायालय किसी एफ.आई.आर को रद्द या निरस्त करने के लिए कर सकता है। न्यायालय ने साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत की गई सामग्रियों पर विचार करने और ऐसे साक्ष्य की विवेचना के बीच एक अंतर निकालना, केवल ऐसे सामग्री जो स्पष्ट रूप से एफ.आई.आर में आरोप साबित करने में विफल रहती हैं, एफ.आई.आर को रद्द करने के लिए विचार किया जा सकता है। न्यायालय ने कहा ;

> "५.....न्यायालय का अधिकार न्याय की उन्नति के लिए है और यदि उस अधिकार का दुरूपयोग अन्याय करने के लिए किया जाता है तो न्यायालय के पास ऐसे दुरूपयोग को रोकने की शक्ति है। किसी भी कार्रवाई की अनुमति देने के लिए न्यायालय की प्रक्रिया का दुरूपयोग अन्याय होगा और न्याय को बढ़ावा नहीं मिलेगा। किसी भी कार्यवाही को रद्द करने के लिए न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग उचित होगा, यदि लगता है कि कार्यवाही शुरु करना या जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है या इन कार्यवाहियों को रद्द करना अन्यथा न्याय के उद्देश्य को पूरा करेगा। जब परिवाद से कोई अपराध न बनता हो, न्यायालय तथ्यों के आधार पर इस प्रश्न की जांच कर सकती है। **जब किसी परिवाद को रद्द करने की मांग की जाती है, तो इसका आकलन करने के लिए उन सामग्रियों पर विचार करने की अनुमति है कि शिकायतकर्ता ने क्या आरोप लगाया है और क्या कोई अपराध हुआ है भले ही आरोपों को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जाए।**

६ आर. पी. कपूर बनाम पंजाब राज्य (एआईआर १९६० एस.सी.८६६:१९६० क्रिमनल एल.जे.१२३६) में इस न्यायालय ने कुछ श्रेणियों के मामलों का सारांश दिया जहां कार्यवाही को रद्द करने के लिए अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। (एआईआर पेज नंबर ८६६, पैरा ६)

(i) जहां यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि संस्थित किए जाने या जारी रखे जाने के विरूद्ध कोई विधिक बाधा है, उदाहरण के लिए मंजूरी की आवश्यक्ता।

(ii) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या परिवाद में लगाये गये आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाये और उनकी सम्पूर्णता में स्वीकार किया जाये, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनता है या अभियुक्त के विरूद्ध कोई मामला नहीं बनता है।

६- (2004) 6 SCC 522

(iii) **जहां लगाया गया आरोप एक अपराध है किन्तु कोई विधिक साक्ष्य पेश नहीं की गई हैं, स्पष्ट रूप से आरोप साबित करने में विफल रहता है**।

७- अंतिम श्रेणी से निपटने में, ऐसे मामले के बीच अंतर को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है जहाँ कोई कानूनी सबूत नहीं है या जहां ऐसे सबूत है जो स्पष्ट रूप से लगाए गए आरोपों से असंगत है, और ऐसे मामले जहां कानूनी सबूत है जो, विवेचना किए जाने पर, आरोपों का समर्थन कर भी सकते हैं और नहीं भी। संहिता की धारा 482 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय, उच्च न्यायालय आम तौर पर यह जांच शुरू नहीं करेगा कि क्या प्रश्न में साक्ष्य विश्वसनीय है या नहीं या इसकी उचित विवेचना पर आरोप लग पाएगा या नहीं। यह विचारण न्यायालय का कार्य है। इसमें कोई संदेह नहीं कि न्यायिक प्रक्रिया प्रपीड़न या अनावश्यक उत्पीड़न का साधन नहीं होनी चाहिए। न्यायालय को विवेक का प्रयोग करने में सतर्क और विवेकपूर्ण होना चाहिए और प्रक्रिया जारी करने से पहले सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा न हो कि यह किसी निजी शिकायतकर्ता के हाथों में किसी भी व्यक्ति को अनावश्यक रूप से परेशान करने के लिए प्रतिशोध लेने का एक साधन बन जाए। साथ ही यह धारा अभियुक्त को सौंपा गया एक उपकरण नहीं है जोअभियोजन को विफल करे और उसके उद्देश्यों को नष्ट कर दे....."

(विशेष् बल दिया गया)

१५ - इस न्यायालय के पूर्व निर्णय स्पष्ट करते है कि कुछ परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत रद्द /निरस्तीकरण करने की अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से पहले अन्य सामग्रियों पर विचार करने का हकदार है। वर्तमान मामले में अपीलकर्ता और दूसरा प्रत्यर्थी कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय के पक्षकार थे। साक्ष्य का कोई विवादास्पद सारभूत या विवादित प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है । इस प्रकार धारा 494 और 495 के तहत अपराध के लिए आपराधिक कार्यवाही को आगे बढ़ाने की अनुमति देना प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। अपीलकर्ता और दूसरे प्रत्यर्थी के बीच यह प्रश्न है कि जिस तारीख को उसने दूसरे प्रत्यर्थी के साथ विवाह किया था, उस तारीख को उसका पूर्व विवाह अस्तित्व में था या नहीं, यह कुटुम्ब न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश के निर्णायक निष्कर्ष का विषय है, जिसने अंतिमता प्राप्त कर ली है। कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम १९८४ की धारा ७ (१) (बी) कुटुम्ब न्यायालय को वैवाहिक स्थिति निर्धारित करने के लिए अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है। धारा ७ (१) कुटुम्ब न्यायालय को जिला न्यायालय का दर्जा प्रदान करती है और धारा ७ (२) इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय IX के तहत प्रथम श्रेणी मजिस्टेट के द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता प्रदान करता है, इस प्रकार इस तरह का निर्धारण करने के लिए साक्ष्य

एकत्रित करने में सक्षम बनाना। इस प्रकार कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करना, जिसके पास आपराधिक मामले में कथित अपराध की गंभीरता का निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र है, उन साक्ष्य सामग्रियों पर विश्वास करने के समान नहीं होगा, जो विचारण न्यायालय द्वारा निष्कर्षित किया गया, जैसे कि मजिस्ट्रेट को भेजे जाने से पहले की अन्वेषण रिपोर्ट।[७] **पीएस राज्य बनाम बिहार राज्य**[८] मामले में इस न्यायालय के समक्ष एक तथ्यात्मक मैट्रिक्स निर्धारण के लिए आया था। इस न्यायालय ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947 के तहत एक अभियुक्त के विरूद्ध एफ.आई.आर को यह कहते हुए रद्द कर दिया कि अभियुक्त को केंद्रीय सतर्कता आयोग द्वारा प्रस्तुत एक रिपोर्ट और संघ लोक सेवा आयोग द्वारा सहमति के आलोक में संबंधित विभागीय कार्यवाही में आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया था। इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने **भजन लाल** (सुप्रा) में निर्धारित सिद्धांतों पर भरोसा किया और यह कहते हुए एफआईआर को रद्द कर दिया :

"१७- शुरुआत में हम यह इंगित कर सकते हैं कि प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर सके कि किसी आपराधिक मामले में अपराध स्थापित करने के लिए आवश्यक सबूत का मानक विभागीय कार्यवाही में अपराध स्थापित करने के लिए आवश्यक सबूत के मानक से कहीं अधिक है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि वर्तमान मामले में विभागीय कार्यवाही और आपराधिक कार्यवाही में आरोप एक ही है। उसने विभागीय कार्यवाहियों में दिये गये निष्कर्षो और इसके अंतिम परिणाम पर विवाद नहीं किया है। **इन आधारों पर, यदि हम आगे कार्यवाही करते हैं तो अपीलकर्ता के मामले को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है। यदि समान आरोप को विभागीय कार्यवाही में स्थापित नहीं किया जा सका और मूल्यांकनकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत रिपोर्टों में स्वीकृत विसंगतियों के दृष्टिगत किसी को आश्चर्य होता है कि क्या अपीलार्थी के विरूद्ध आपराधिक कार्यवाही में अग्रसर होने के लिए आधार हैं ...**

२३- भले ही केंद्रीय सतर्कता आयोग की रिपोर्ट सहित इन सभी तथ्यों को उच्च न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था, उच्च न्यायालय ने यह विचार किया कि उठाए गए प्रश्नों को अंतिम कार्यवाही और केंद्रीय सतर्कता आयोग की रिपोर्ट में शामिल किया जाना चाहिए, विभागीय कार्यवाही में अपीलकर्ता को उसी आरोप से मुक्त करने से अपीलकर्ता के विरूद्ध आपराधिक प्रकरण समाप्त नहीं होगा। इस न्यायालय द्वारा पहले ही यह अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि दिए गए कारणों से, इस मामले के विशिष्ट तथ्यों पर अपीलकर्ता के विरूद्ध शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही आगे नहीं बढाई जा सकती है। इसलिए जैसा कि उपर कहा गया है, हम उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं। अपील की अनुमति देने और

7- Pratibha v. Rameshwari Devi, (2007) 12 SCC 369, paras 17-21; state of Madhya Pradesh V.Awadh Kishore Gupta, (2004) 1 SCC 691, para 13

8- (1996) 9 SCC I

विवादित आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने और पारिणामिक अनुतोष देने के आदेश दिनांक २७-०३-१६६६ के यही कारण हैं।"

(विशेष् बल दिया गया)

इसलिए इस मामले में, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश का इस निष्कर्ष पर पहुंचना उचित नहीं था कि यह प्रश्न कि क्या अपीलकर्ता ने पहले से कोई विवाह किया था, एक "अत्यधिक विवादास्पद मामला " था, अभिलेख के आधार पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर प्रकरण का निराकरण किया जाएगा।

१६- उपरोक्त कारणों से अपील की अनुमति प्रदान की जाती है और उच्च न्यायालय गुवाहाटी के आक्षेपित निर्णय व आदेश दिनांक ०४ अप्रैल २०१८ को निरस्त किया जाता है। अपीलकर्ता द्वारा परिवाद को रद्द करने के लिए संस्थित की गई आपराधिक याचिका क्र. १७६/२०१६ स्वीकार की जाती है। एस.डी.जे.एम (एस) II कामरूप (एम), गुवाहाटी के न्यायालय में लम्बित शिकायत/परिवाद निरस्त किया जाता है।

१७- लम्बित आवेदन, यदि कोई हों, निरस्त किए जाते हैं।

अपील स्वीकार

अनुवादक

सुश्री रीना शर्मा
दशम व्यवहार न्यायाधीश कनिष्ठ खण्ड
सागर (म.प्र.)